क्या नहीं हो सकता

क्या नहीं हो सकता

रमेश पोखरियाल 'निशंक'

विनसर पब्लिशिंग कम्पनी
देहरादून

क्या नहीं हो सकता

: रमेश पोखरियाल 'निशंक'

संस्करण	:	प्रथम, 2007
ISBN	:	81-86844-01-9
मूल्य	:	Rs. 150/-
प्रकाशक	:	**विनसर पब्लिशिंग कम्पनी** प्रथम तल, नैथानी काम्प्लेक्स 120, डिस्पेन्सरी रोड, देहरादून-248001
शब्द संयोजन	:	विनसर कम्प्यूटर्स 56/6 कैनाल रोड, जाखन देहरादून दूरभाष : 3094463
वितरक	:	मलिका बुक्स 348 मेन रोड, संत नगर (बुराड़ी) दिल्ली-110084 दूरभाष : 27612927
मुद्रक	:	एलाइड प्रिन्टर्स देहरादून

K-------------------- Price : Rs. 150/

अनुक्रम

दे सको तो	5
क्या नहीं हो सकता	5
बन्द	5
कितना ईमानदार	5
वह जरूर लौटेगा	5
किसे दोष दूं	5
आत्महत्या करूंगी	5
दरा कहां पड़ी	5
रिक्शा वाला	5
अपरिचित	5
कैसी किस्मत	5

....

दे सको तो

नितिन की गम्भीरता दिनों–दिन बढ़ती जा रही थी। कामिनी ने समझने का जी तोड़ प्रयास किया, किन्तु वह असफल रही, पूर्णतया असफल। जब भी दोनों के बीच कोई हंसी–खुशी का क्षण होता नितिन का चेहरा यकायक मुरझा जाता और दूसरे ही क्षण सारा वातावरण बोझिल बन उन्हें खाने को दौड़ने लगता है। 'शायद ही कोई दिन ऐसा बीता हो, जब ऐसा न होता हो। कई बार तो कामिनी की बाहों में ही नितिन की अश्रुधारा फूट पड़ती थी, पूछने पर भी जब नितिन कुछ न बताता तो भावुक कामिनी की आंखों से भी आंसू टपकने लगते।'

कामिनी फिर भी सोचती रही कि आज नही तो कल अवश्य ही वह नितिन के इस रहस्य का कारण जान लेगी। और तभी उसके मन को शान्ति मिल पायेगी। यों ही धीरे–धीरे एक वर्ष बीत गया, किन्तु अभी तक कामिनी नितिन के मन की बात जान पाने में सफल नहीं हो सकी थी, हर बार नितिन यों ही टाल जाता था। अपनी मायूसी के कारण को....!

कामिनी इस बात को लेकर हमेशा ही तरह–तरह की शंकाओं से घिरी रहती। उसका संदेह बढ़ता चला गया कि शायद नितिन को उसके शादी करने का दु:ख है। क्या वह उसे पाकर खुश नहीं है ? किन्तु यदि वह ऐसा नही चाहता था तो उसे शादी नहीं करनी चाहिए थी। उसने

शादी से इन्कार क्यों नही किया ?

शायद पिता के दबाव के कारण ? हां ! याद आया एक बार नितिन ने पिताजी जी से कहा था कि मुझे शादी से पूर्व बहुत कुछ सोचना है, क्या सोचना था आखिर नितिन तुम्हें ? न जाने क्या चाहते थे तुम ? मैं जानती हूं नितिन ! कि मैं ही तुम्हारे दुःख का वास्तविक कारण हूं। पहले तो मैने तुम्हें कभी इस तरह मायूस नहीं देखा था। हर क्षण मुस्कराते रहते थे। तुम्हारा चेहरा हर वक्त खुशियों से भरा रहता था, और आज वही तुम जब-तब हर्षोल्लास के अवसर पर भी चुपचाप आंसू बहाते रहते हो। तुम्हारे इन आंसुओं का कारण मैं हूं सिर्फ मैं - और इन्हीं शब्दों को कई बार दोहराते हुए आज कामिनी फूट-फूट कर रोने लगी।

उस दिन कामिनी के आंसू पोंछकर नितिन ने उसे सीने से लगा लिया था किन्तु मुंह से कुछ भी न कह पाया, कामिनी का सन्देह और गहरा होता गया। चौबीसों घण्टे कामिनी इसी उधेड़-बुन में लगी रहती थी कि आखिर उससे कौन सी गलती हुई है ?, कौन सी कमी है उसमें ? पड़ी-लिखी होने के ही साथ-साथ सुन्दरता में भी तो वह किसी से कम नही है ?

किन्तु उसकी समझ में नहीं आता था कि यदि नितिन मुझे नही चाहता तो मुझसे दूर रहने की कोशिश करता ? और फिर प्यार भी तो वह कम नहीं करता ? जरा सी भी तबियत खराब हो तो परेशान हो जाता है। क्या नहीं दिया उसने मुझे ? मेरे जीवन में खुशियां ही खुशियां भर दी हैं उसने, नहीं-नहीं उस पर किसी बात का दोषारोपण करना उसके प्रति अन्याय होगा।

दिन-रात क्या-क्या नहीं सोचती थी कामिनी, किन्तु नितिन के इस व्यवहार का कारण वह आज तक नहीं खोज पाई। आखिर क्या हो जाता है नितिन को किसी भी खुशी के मौके पर। वह कभी समझ नहीं पाई।

एक दिन कामिनी अपनी जिद पर अड़ गई, नितिन ! आज तुम्हे बताना ही होगा कि वह कौन सी बात है जो पत्नी होने पर भी तुम मुझे नही बता सकते ? क्या मैं इस योग्य नहीं ? कि तुम्हारे सुख-दुःख में शरीक हो सकूं, तुम्हारा दुःख बांट सकूं ? तुम्हारे व्यवहार से तो लगता

है कि जैसे तुम्हारे दु:ख का कारण में ही हूं। इसलिये तुम मुझे बताना नही चाहते। नितिन, तुम्हारे इस तरह गुमसुम रहने से मैं बहुत परेशान हो जाती हूं। आखिर क्या किया है मैंने ऐसा ? क्या गलती है मेरी ? क्यों तुम मुझसे इतनी घृणा....।

'नहीं नहीं कामिनी ! तुम मुझे गलत समझ रही हो, मेरे हृदय में तुम्हारे प्रति आसीम स्नेह और आदर है, तुम्हारा बार-बार यह कहना कि तुमसे विवाह करके मैं दु:खी हूं या मैं तुमसे घृणा करता हूं, ठीक नहीं है। दरअसल मेरी कुछ आदत सी बन गई है कि अधिक खुशी मुझसे बर्दाश्त नहीं होती। खुशी के माहौल में अनायास ही मेरी आंखों से आंसू फूट पड़ते है। बहुत रोकने का प्रयास करता हूं कामिनी ! पर ये आंसू हैं कि रूकते ही नही। मेरी इस आदत का गहरा सम्बन्ध मेरे बचपन से से है। जो न चाहने पर भी अब तक....। पर कामिनी ! तुम अपने मन पर इस बात का बोझ न ढोया करो।'

कामिनी ने भाववेश में नितिन की बाहें पकड़ ली, 'क्या आप नहीं समझते की एक पत्नी पति के सुख-दु:ख की हर तरह से भागीदार होती है। उसे पूरा हक होता है अपने जीवन-साथी के जीवन पर। क्या पत्नी के इस अधिकार को भी आप मुझसे छीनना चाहते है ?'

'नही, कामिनी नही।'

'यदि नही, तो तुम्हें मेरी सौगन्ध ! जो मुझसे उन सारी बातों को छिपाया जिन्हें आप आज तक छिपाते रहे हो।'

नितिन के चेहरे पर पुन: एक विचित्र सी गम्भीरता घिरने लगी। उसने देखा कि कामिनी की आंखो से अजस्त्र अश्रु धारा बह रही है। कामिनी को अपनी बाहों में समेट कर नितिन जैसे अतीत में कहीं खो गया।

'तब मैं बहुत छोटा था, कामिनी ! पिताजी नौकरी करते थे। बड़े भाई प्रशासनिक सेवा में आ गये थे। एक नन्ही सी बहिन थी मुझसे भी छोटी। सारा परिवार खुशियों से भरा था।' मानो संसार की सारी खुशियां उसमें समा जाना चाहती थी, पर विधाता को जैसे हमारी खुशियां नागवांर लगी। और सारी खुशियां जैसे एक-एक कर हमसे रूठती चली गई। भाई की अचानक किसी दुर्घटना में अकाल-मृत्यु और ठीक एक

सप्ताह बाद ही नन्ही सी हंसती खेलती बहिन भी चल बसी, एक साथ इन दो-दो विपत्तियों के कहर मां बर्दाश्त न कर सकी और पागल हो गई। पिता ने बड़ी मुश्किल से किसी प्रकार हमें संभाला। पाला-पोसा, पढ़ाया-लिखाया और हमें इस योग्य बनाया, उनकी बड़ी अभिलाषा थी कि हम दोनों भाई अपने पैरों पर खड़े हो जाएं बस। किन्तु ईश्वर को माता-पिता की ये खुशियां मन्जूर न हुयी और एक दिन वे भी....।'

नितिन की आंखों से निरन्तर बह रही अश्रुधारा ने उसकी सारी कमीज तर कर दी थी, जबकी कामिनी अपने पल्लू से नितिन के आंसू पोंछे जा रही थी।

थोड़ी देर रूकने के बाद नितिन बोला- 'कामिनी ! अब हमारा परिवार रह ही कितना गया है ? मात्र एक भाई है। और उससे भी तुम मुझे अलग रहने की बात करती हो। अलग रहना तो दूर मैं अलग होने की कल्पना भी नही कर सकता।'

कामिनी ! मैंने परिवार की ढ़ेर सारी खुशियों को भी देखा है और गमों को भी, इसीलिये ज्यादा खुशियां पाकर सहम जाता हूं। सोचता हूं अगले ही क्षण न जाने क्या हो जाय, तुमसे शादी हुई और मैंने अपार खुशियों को अपने दामन में संजोया, किन्तु डर लगता है कि कोई मुझसे मेरी ये खुशियां न छीन ले। कहीं ये खुशियां गम के बादल न बन जांए।

'कामिनी ! दे सको तो मुझे ये वचन दो कि मुझे भाई से अलग होने की बात नहीं कहोगी।'

कामिनी की आंखें छलक आई। नितिन का माथा चूमते हुए बोली - 'मेरे लिये सब कुछ तुम्हीं हो नितिन, तुम्हारी खुशियां ही मेरी खुशियां है। जैसा तुम चाहोगे, वैसा ही होगा।'

● ●

क्या नहीं हो सकता ?

उसकी निगाह मुझ पर आकर टिक गई थी, मुझे लगा कि वह मुझे कुछ पहिचानने की कोशिश कर रहा है। तभी उसने दूर से नाम लेकर मुझे आवाज लगाई, और मेरी ओर बढ़ने लगा। मुझे भी यह चेहरा कुछ जाना पहचाना लग रहा था। मैंने दिमाग पर जोर डाला कौन हो सकता है यह आदमी, है भी निकट का, नाम लेकर साधि-कार आवाज दी है उसने मुझे। पर कोशिश करने के बाद भी मैं उसे पूरी तरह नहीं पहचान सका।

बड़ी-बड़ी दाढ़ी, चेहरे पर अभाव की झुर्रियां, काला सा कोट, धारीदार मैली सी पैन्ट और फटे सफेद जूते पहने वह मेरे सामने आकर खड़ा मुझे अजीब दृष्टि से घूरने लगा....।

'पहचाना नहीं मुझे ?'

'पहचान तो रहा हूं पर....'

'ऐसा ही होता है जब कोई बड़ा आदमी बन जाता है तो छोटे-मोटे लोगों का ध्यान नहीं रहता। पर इतनी जल्दी भूलना भी क्या-खैर कई साल भी तो हो गये है।'

वह व्यंग पर व्यंग कसता जा रहा था। मेरी तो कुछ भी समझ में नही आ रहा था, मैंने उसको हाथ जोड़कर कहा।

'क्षमा करियेगा मेरी भूल के लिए, मैं ठीक से पहिचान नही पा रहा

हूं।'

मेरे कन्धों पर हाथ रखते हुए बोला।

'मैं कमल हूं, हरिद्वार....।'

नाम को सुनते ही मुझे हरिद्वार की सारी यादें ताजी हो आई थी। मैंने हाथ बढ़ाये ही थे कि वह गले से आकर लिपट गया, मुझे उसकी इस हालत पर बहुत आश्चर्य हो रहा था।

'क्या हालत बन रखी है ये ?'

वह मायूस होकर बोला

'भाग्य को कौन बदल सकता है किस्मत में यही सब लिखा है न, तो कोई कर भी क्या सकता है। दस वर्षों से नौकरी के लिए दर-दर भटक रहा हूं आज तक सैकड़ो इन्टरव्यू दे चुका हूं, पर कहीं भी तो ? खैर छोड़ो, तुम बताओ क्या हाल है तुम्हारा ?'

'फिलहाल तो ठीक ही हूं।'

'हरिद्वार से कहां-कहां गये कुछ बताओ भी तो सही।'

'हरिद्वार से जाना कहां था, पहले तो नौकरी के लिए भटकता रहा। वर्षों तक कभी इधर-कभी उधर, एक जगह कहीं भी ठौर ठिकाना नहीं मिला। बड़ी मुश्किल से एक छोटी-मोटी नौकरी मिली पर पढ़ाई के लिए छटपटाता ही रहा, उसे भी छोड़ दिया और तब से न जाने पढ़ाई के लिए मुझे क्या-क्या नहीं करना पड़ा है।'

वह और गम्भीर हो गया था।

'पर भटकने का कुछ लाभ तो मिला तुम्हें ? आज कौन जानता है कि तुमने इतना सब कुछ झेला होगा। और हम जैसे लोग तो यह सब झेलने के बाद भी कुछ नहीं पा सके है।'

'सब ठीक हो जायेगा कमल, धैर्य रखने की आवश्यकता होती है।'

'कब तक धैर्य रखेंगे ? यहां तो सब सीमायें टूट गई।'

फिर बोला - 'अच्छा ये तो बताओ कि हरिद्वार आना क्यों छोड़ दिया, या आते हो और चुप-चाप चले जाते हो ?'

'नहीं कमल भाई न तो मैं हरिद्वार को भूला हूं और न ही पुराने मित्रों को।'

'यदि भूले न होते तो वर्षो में कभी तो याद आती ? अच्छा अब

बताओ कब आ रहे हो, कोई दिन निश्चित करो तो सभी लोगों को जाते ही बता दूं।'

उसने मुझ पर नाराजगी व्यक्त करते हुए हरिद्वार पहुंचने की तारीख पक्की कर दी।

'धनेश, दुर्गेश, मनीष सबको ही सूचना दूंगा मैं' कहते-कहते वह कहीं खो सा गया था।

'कहां खो गये कमल ? क्या सोचने लगे ?' मैंने धीरे से उसे स्पर्श करते हुए कहा।

'कुछ भी तो नहीं।'

'नही ! कुछ तो सोच रहे थे।'

'बस यों ही कि हम जैसे लोग तो बेकार ही जन्म लेते है।'

'क्या बात लेकर बैठ गये कमल, चलो घर चलो' और मैं कमल को घर ले आया था।

कमरे पर ताला लगा देखकर वह चौंक सा गया था, ताला खुलते ही अंदर आकर बोला।

'क्यों अभी भी अकेले हो ? मैं तो सोचकर आ रहा था कि....'

'कि घर में अच्छी खासी फौज होगी न !'

और मैं ठहाका मारकर हंस पड़ा था लेकिन उसके चेहरे पर मुस्कराहट का नाम न था।

'पर हरिद्वार में तो....' कह कर वह खड़े-खड़े कमरे की एक-एक चीज देखने लगा।

'हां शादी की बात सुनी होगी न !, पूरे दो साल हो गये। अच्छा बैठ भी तो जाओ ? चाय बनाकर लाता हूं।'

मैं किचन की ओर जाने को हुआ कि बोला -

'इतनी जल्दी नहीं, भाभी को आने भी तो दो ? आज तो उन्हीं की हाथ की चाय पियेंगे।'

'भाभी यहां हो तब न !'

'कहां गई है, मायके भेजा हुआ है क्या ?'

'नही तो ! नौकरी....'

'अच्छा ! नौकरी पर है ? ये तो अच्छा हाथ मारा है तुमने, ये तो

बताओ कहां पर है।'

'यहां से सौ किलो मीटर दूर।'

'तो खाने-पीने की क्या....'

'स्वयं ही बनाता हूं, स्वयं ही खाता हूं....'

'तब तो छुट्टियों में ही भाभी जी यहां आती होंगी।'

'हां और कभी छुट्टियों में मैं भी चला जाता हूं।'

मैं हंसते हुए बोला। फिर तो वह भी मजाक के मूड में आ गया था।

'यार मैं तो अब सब बेरोजगारों को लेकर आन्दोलन करने वाला हूं। यहां तो नौकरी के लाले पड़ रहे हैं और तुम मियां-बीबी दोनों को नौकरी।' और फिर ठहाकामार कर हंसने लगा।

इतनी देर में वह पहली बार हंसा था। उसके चेहरे का सारा तनाव एकाएक खत्म हो गया था।

'चलो अच्छा किया तुमने, पर तुम कम चालाक नहीं निकले शादी की हवा तक नही लगने दी किसी को.....।'

'चाय पीते-पीते वह कमरे की एक-एक वस्तु को गौर से देखे जा रहा था।'

'ये फोटो भाभी जी का है।'

'हां...'

'यार अच्छी जगह हाथ मारा,' कह कर फिर हंसने लगा।

थोड़ी देर बात करने के बाद हम दोनों लोग मिलकर खाना बनाने लगे बोला -

'लगता है खिचड़ी अभी भी तुम्हारा पीछा नहीं छोड़ेगी।'

'नही ! इसका तो जनम-जनम का नाता हो गया मुझसे।'

निशांत शादी के बाद भी यह स्थिति तो ठीक नही, सर्विस वाली लड़की का मतलब पूरा परिवार अस्त-व्यस्त।

'लेकिन जमाना भी तो बदल गया, और फिर लिखी-पढ़ी लड़कियां. ..'

'ये बात तो ठीक है, पर हम बेरोजगारों पर भी कुछ तो तरस खाओं' कहकर वह फिर हंस दिया था।

भोजन करने के बाद बिस्तर पर लेटकर बोला -

'किस्मत साथ नहीं दे रही निशांत भाई !'

'इस बीच रात-दिन इन्टरव्यू देता रहा, हर इन्टरव्यू बहुत अच्छा रहा। इन्टरव्यू देने के बाद बड़ी खुशी-खुशी घर आता था। नियुक्ति पत्र की प्रतीक्षा में एक-एक दिन काटा मैं सोचता रहा कहीं से तो नियुक्ति पत्र आयेगा। रोज पोस्ट ऑफिस के चक्कर काटता, इस प्रतीक्षा ने दस साल बर्बाद कर दिये। पैसा भी कम बर्बाद नहीं हुआ, घर में कमाने वाला कोई नही, तीन-चार भाई बहिन हैं पर सब मुझसे छोटे।'

इधर मैं बेरोजगार, और उधर मां ने मेरे गले में एक और फांसी लगा दी।

मैंने पूछा -

'शादी की बात है न, अरे इसने तो समय पर होना ही था।'

वह कुछ झुंझला कर बोला -

'यह भी तो मेरी बदकिस्मती है ! शादी भी हुई तो पत्नी एकदम अनपढ़, गंवार। घर में जमीन जायजाद बहुत है मां अकेली पड़ गई थी इसलिए मना भी न कर सका।'

'घर में पिता जी तो होंगे ?'

'अगर पिता जी जीवित होते तो ऐसी स्थिति नहीं आनी थी, खेती-बाड़ी में उन्हें किसी की सहायता की जरूरत नहीं पड़ती थी। सब अपने आप करवाते थे। पर उनके जाने के बाद तो मां पर सारा बोझ पड़ गया एक तरफ हम सभी भाई-बहिनों की लिखाई-पढ़ाई और दूसरी तरफ घर के काम-काज से लेकर इतनी बड़ी खेती-बाड़ी। यार पढ़ाई ने तो हमें न घर का और न घाट का, कहीं का भी नहीं छोड़ा।'

मैं मजाक करते हुए बोला -

'यहां भी इन्टरव्यू देने आये थे क्या ?'

'हां सुबह पहुंच गया था इन्टरव्यू दिया। तुम्हारा पता किया। सोचकर तो हरिद्वार से ही यही आया था कि तुम्हें जरूर मिलकर आऊंगा।'

'ये इन्टरव्यू कैसा रहा ?'

'इन्टरव्यू तो बहुत अच्छा रहा, पर मुझे विश्वास नही, मंत्रियों के पत्रों को लेकर लड़के घूम रहें थे, कुछ तो बीस-बीस हजार रूपये लाये हैं हममें न तो किसी मंत्री के पत्र लाने की समर्थ्य है ओर न पैसा

खिलाने की हिम्मत।'

'क्या कोई पैसा ले रहा है ?'

हंसकर बोला -

'यह तो सामान्य सी बात हो गई, पहले के अधिकारी डरते थे पर अब खुली बोलियां लगती है। पैसा दो और नौकरी लो, सब बिके हुए है।'

'पैसा किसको दो।'

'अधिकारी को। और बाबू के माध्यम से, बाबू की भी मौज है चाहे जिससे जितना पैसो लो, आधा अधिकारी के घर और बाकी अपनी जेब में ?'

'कमल यह बात मानने को मै तैयार नहीं कि सभी अधिकारी कर्मचारी भ्रष्ट हो गये।'

'ये भी बात सही है बहुत सारे अधिकारी-कर्मचारी आज भी ईमानदार है, पर आज इनकी संख्या है ही कितनी ? न के समान है।'

'सच कहता हूं निशांत ! मैं तो इस व्यवस्था से इतना खिन्न हो गया हूं कि अब जीवन से भी घृणा होने लगी है, कई बार भारी अक्रोश से घिर जाता हूं, अपने को सम्भालना बड़ा मुश्किल हो जाता है। मन में आता है या तो आत्म हत्या कर दूं या किसी अधिकारी पर टूट पड़ूं।'

मैंने घूम फिर कर देख लिया है कि जो बड़ा है वह बड़ा ही होता चला जा रहा है और जो गरीब है वह और नीचे जा रहा है।

रात भर वह आपबीती सुनाता रहा, सुबह उठा तो पहली बस से हरिद्वार निकल गया, बहुत निराश था, क्या-क्या बातें नही आ गई थी उसके मन में, मैंने बहुत समझाने की कोशिश की थी उसे कि दुनियां में बस एक तरह के लोग नहीं पर उसके दिमाग में एक ही धुन सवार हो गई थी कि 'अधिकतर अफसर भ्रष्ट है मैं अब पहले तो इन्टरव्यू दूंगा ही नहीं यह मैंने ठान लिया और यदि इन्टरव्यू दिया तो जहां-जहां भी जाऊंगा ऐसे अधिकारियों को मारे बिना वापस नहीं लौटूंगा, अब तो चाहे मुझे फांसी हो चाहे जेल, जेल में कुछ दिन चैन से तो रहूंगा।'

उसके चले जाने के बाद महिनों तक उसकी तमाम बातें मेरे मस्तिष्क में घूमती रही, कभी-कभी मुझे डर लगता न जाने कमल कब

क्या कर बैठे। हरिद्वार पिछले दिनों गया तो पता चला एक साल हो गया कमल को हरिद्वार छोड़े। किसी को पता भी तो नहीं कि कहां गया।

अब कितने वर्ष बीत गये कमल को देखे। पौड़ी से जाने के बाद मिला ही कहां ?

ऋषिकेश का रोड़वेज बस अड्डा, मैं बस की प्रतीक्षा में बैठा हूं, कमल की मिलती-जुलता शक्ल का कोई व्यक्ति बस से उतरा है, मैं बेंच से उठा उसकी ओर बढ़ने को कदम बढ़ाये, फिर रूक गया, यह कमल नहीं हो सकता, इतना हष्ट-पुष्ट और मुस्कराता चेहरा ? पर बस से उतरते ही सूटकेश हाथ में लिए टिकट की खिड़की की ओर बढ़ते कमल ने मुझे देख लिया था, सूटकेश को वहीं छोड़ मेरे सीने से आ लिपट गया था, और बहुत देर तक ऐसा चिपका रहा मानों वर्षों की लगी 'खुद' को मिटा देना चाहता हो।

उसका खिल खिलाता-चेहरा और गालों पर आयी लालिमा से मुझे अनुमान लगाने में देरी नहीं लगी कि यह कमल की खुशहाली का परिणाम है, उसका खिला हुआ चेहरा, और भरे हुए इस चेहरे पर आयी मुस्कान ने मुझे गदगद कर दिया था ? कमल के सूटकेश की ओर बढ़ते हुए मैं उसका हाथ पकड़कर बोला -

'तुमने तो खुश कर दिया है मुझे। खूब सेहत बनाई है। लगता है कहीं अच्छी नौकरी पर कम से कम मुझे एक चिट्ठी तो डाल देते।'

वह खिलखिलाकर हंसा -

'साली नौकरी ने तो मेरी जान ही ले ली थी एक दो साल और पीछे पड़ता तो मर ही जाता, पौड़ी में मैंने कहा था न कि यह मेरा आखिरी इन्टरव्यू होगा, और हुआ भी यही'

'कहां नियुक्ति मिली'

'गांव में और घर पर।'

'क्या मजाक करने लगे ?'

'मजाक नहीं सही बोल रहा हूं। जिस पत्नी को मैं अनपढ़ गंवार और भार स्वरूप कहता था न, उसने मुझे बदलकर रख दिया।'

'वो कैसे ? बाताओगे भी तो।'

'एक दिन मैं थका हारा घर में बैठकर अपने भाग्य को को कोसने

लगा। सुनीता बोली – 'आप तो बिना बात भाग्य को कोसते है। नौकरी के चक्कर में पड़कर, यदि मालिक बनने की इच्छा रखते तो....।'

सुनीता की मूर्खता पर मुझे हंसी आयी पर मुझे लगा जैसे ये मेरे पुरूषार्थ को चुनौती दे रही है, मैं हंसते हुए उससे यों ही पूछ बैठा –

'अब जादू तो तुम्हीं करोगी जिससे मैं मालिक बन जाऊंगा, अरे मूर्ख ! मालिक बनने के लिए भी तो....' मैंने अपना सिर पकड़ लिया था।

पर वह तुरन्त बोली –

'करने को बहुत कुछ है, करने वाला चाहिए। मेहनत करने से क्या नहीं हो सकता।' उसने तमाम बिकल्प मेरे सामने रख दिये। साथ ही बोली –

'मैं भी तो सहयोग करूंगी ! क्या परेशानी है आप अकेले ही थोड़ी करेंगे ये सब ....'

उसकी बातों ने मुझमें एक नई आशा का संचार कर दिया था, मुझे लगा जैसे सफलता अब अधिक दूर नहीं है और मैं रात–दिन मेहनत में जुट गया, ईश्वर ने मेरी मेहनत का फल भी दिया मुझे।

तमाम ठोकर खाने के बाद आज मेरे पास सब कुछ है मैं बहुत खुश हूं मेहनत ने मेरे गिरते आत्म सम्मान व स्वावलम्बन को वापस लौटाया है।

आज सोचता हूं तब कितना मूर्ख था नौकरी के पीछे चक्कर काट–काटकर विक्षिप्त सा जिन्दगी बर्बाद करने पर तुला था।

डॉ० रमेश पोखरियाल 'निशंक'
सम्प्रति- साहित्यकार (लेखक एवं कवि)
३७/१ विजय कॉलोनी,
रवीन्द्र नाथ टैगोर मार्ग
देहरादून।
फोन- ०१३५-२७५५८९९

● ●

बन्द

भारत बन्द पूरी तरह सफल रहा है, एक भी तो दुकान नहीं खुली है। यहां तक कि पान के खोखे तक नहीं खुले, उधर तो लड़कों ने एक टैम्पो को बुरी तरह तोड़-फोड़ दिया है। टैम्पो में बैठे दो लोग बुरी तरह घायल हो गये। टैम्पो वाला माथा पटक-पटक कर रो रहा था किराये का टैम्पो था बेचारे का उतना कमाया नही, जितना देना पड़ेगा - 'इधर टैम्पो वाला रो रहा था, बगल में रिक्शे वाला कहता था, टूट-फूट तो मुझे ही देनी पड़ेगी। दस रूपया रोज की ध्याड़ी पर है रिक्शा, बड़े लोगों पर क्या असर पड़ता है बन्द का। उनका काम तो तब भी चलता रहता है।

उसकी आंखो में आंसू टपक रहे थे, उसके सामने काफी लोग खड़े उससे सहानुभूति जतला रहे थे।

हम लोग घूमते-घूमते अब काफी दूर निकल पड़े थे, एक खुले होटल पर नजर पड़ी तो तेजी कदम बढ़ाने लगे। चलो चाय तो नसीब हो ही जायेगी।

होटल पर पहुंचकर अभी सीट पर बैठे हम सुस्ताये भी नहीं थे कि बीस-तीस लड़कों का एक जत्था वहीं आ धमका, पहले उन्होंने होटल मालिक को बुरा भला कहा और फिर गला पकड़ कर उसे बाहर खींच दिया।

कुछ लड़के जबरन होटल का शटर खींचने लगे। अन्दर बैठे सभी

लोग घबरा कर चिल्लाये 'अरे भई हमें तो बाहर आने दे' गुस्सा तो सभी लोगों को आ रहा था किन्तु कौन करे विरोध। चुपचाप सभी होटल से बाहर निकल गये। एक व्यक्ति जिसके सामने अभी-अभी खाने की थाली आई ही थी, बाहर नहीं निकला, और तेजी से बड़े-बड़े ग्रास मुंह में डालकर खाना खाता रहा, लड़कों ने उसे तुरन्त बाहर आने को कहा, पर वह निरन्तर खाना खाता रहा।

तीन चार लड़के उस पर बिगड़ पड़े-बड़ा अकड़ता है साला।

उन्होंने उसका हाथ पकड़ा और बाहर घसीटने लगे। पर उसने थाली को हाथ से नहीं छोड़ा उसे विश्वास था कि दुकान से बाहर निकल कर भी वह अपना खाना खा सकेगा, पर लड़को की भीड़ ने उसकी आशाओं पर पानी फेर दिया। थाली पर लात मारकर उसे भी दो चार हाथ जड़ दिये।

हम कुछ कहते कि हमसे भी वे लड़ाई के लिये उतर आये। लोगों ने कहा क्यों उलझ रहे हो लड़कों से अपनी इज्जत बचानी है तो चुप रहो। सभी लोग चुप हो गये।

पांच बजे का समय था इस दृश्य को देखते ही आस-पास की छोटी-मोटी सारी दुकानें धड़ा-धड़ बन्द होती चली गई।

भोजन करता वह मजदूर लुटा हुआ सा एक किनारे खड़ा हो गया। वह आंखें फाड़-फाड़ कर बहुत देर तक उल्टी पड़ी थाली को देखता रहा। क्यों न देखता उसकी मेहनत मजदूरी पर लात जो मार दी गई थी, हम लोग आपस में फुसर-फुसर करने लगे 'क्या सोच रहा होगा बेचारा। कितना आक्रोश है उसके चेहरे पर।'

'लगता है अभी किसी को खा जायेगा'

लेकिन पांच बजे क्यों खाना खा रहा होगा ? समझ में नही आया। अक्सर मजदूर तो सुबह घर से खाना खाकर ही निकलते है।

'अपना घर नहीं होगा इसका क्या ? कहीं से मजदूरी करने आया लगता है।'

'हां ! देखा नहीं लड़के जब उसे बाहर खींच रहे थे तो फिर भी थाली पर कैसे चिपका हुआ था। फिर भी दुष्टों ने....।'

इतने में सामने फिर हंगामा मच गया लोग तमाशा देखने उस ओर

भागने लगे पर वह स्टूल पर निराश बैठा आक्रोश भरी दृष्टि से लोगों को निहारता रहा।

भण्डारी उसकी ओर बढ़कर बोला – 'आपको कहीं जाना रहा होगा।'

वह चुप्पी साधे रहा। भण्डारी के दुबारा पूछने पर बोला – 'साब जाना कहां हैं कौन जाने देगा हमें, कहां जायें हम ? यहां तो नेताओं का काम रोज बन्द करवाना, हड़ताल करवाना, किसी ने विरोध किया तो तोड़–फोड़ तक करवा देना, यही सब रह गया है। इन लोगों का तो क्या बिगड़ता है हम गरीब मजदूर मारे जाते है, हमारे बच्चे भूखों मर जाते है, कोई पूछने वाला नहीं।' उसकी आंखे भर आई थी।

'कहीं काम करते हो क्या ?' द्विवेदी जी भावुक हो उठे।

'मजदूरी करता हूं साब, काम की ढूंढ में सुबह निकल जाता हूं कल तो हड़ताल के कारण कहीं भी काम नहीं मिला। आज सुबह बिना खाये पिये रात खुलने से पहले ही निकल गया था। खाता भी तो क्या ? कुछ घर पर होता तभी तो....।'

'परिवार भी है तुम्हारा ?'

'दो बच्चे हैं किसी तरह पाल रहा हूं। आज कितनी दूर जाकर काम मिला। ठेकेदार जी से कुछ पैसे लेकर चाय पानी की दुकान ढूंढने निकला था किस्तम से होटल खुला मिल गया था पर....।' उसने जोर से मुठ्ठियां भींच ली थी।

तीन–चार लोगों का एक झुण्ड आकर हमारे पास ही खड़ा हो गया था।

'बर्बाद हो जायेगा ये देश तो। रोज–रोज के इस बन्द से कितना नुकसान उठाना पड़ रहा है इसकी किसी को चिन्ता नही।'

'एक तरफ राजनीतिक पार्टियां बन्द और चक्काजाम करती है, दूसरी ओर ट्रेड यूनियनों के नेता आये दिन हड़ताल करवाते है, बचे थे सरकारी कर्मचारी तो वे भी अब इससे अछूते नही रहें। रोज–रोज का चक्कर हो गया है ये।'

सबको अपनी–अपनी राजनैतिक रोटियां सेंकने से मतलब है। जरा मेहनत करें तो पता चले इनको।

उनमें से ही एक उनके बीच से बोला – 'यार ये हड़ताल तो मंहगाई के विरोध में है। मंहगाई ने भी तो आसमान छू लिया है। रोजमर्रा की चीजों के दाम तो इतने बढ़ गये है कि सामान्य वर्ग की तो कमर ही टूट जायेगी।'

'लेकिन हड़ताल और बन्द से मंहगाई घट तो नहीं जायेगी।'

'अरे कुछ तो होगा, सफल बन्द से सरकार पर दबाव पड़ेगा, कुछ तो सरकार की समझ में आयेगी।'

'लेकिन भई अच्छा लक्षण नहीं है ये। ऐसे बन्द से कोई लाभ नही जिससे आम जनता को हानि उठानी पड़े, आखिर में नुकसान तो देश का ही है। एक दिन काम-काज ठप्प पड़ने से देश को करोड़ो-अरबों का नुकसान भुगतना पड़ता है। वैसे भी देश, विदेशी कर्जे से इतना दबा हुआ है कि आने वाला बच्चा पैदा होने से पहले विदेशी कर्जवान बना है।'

एक बुजुर्ग चिल्लाये – 'अरे किसे पड़ी है देश-वेश की यहां तो सबको राजनीति करनी है। इससे ज्यादा कुछ नहीं बन्द सफल हो या असफल कुल मिला कर यह देश के लिये अच्छा लक्षण नही।'

बन्द करने वालें का झुण्ड नारे लगाता हुआ पास से गुजरा। हमने देखा इनी-गिनो जो दुकान खुली थी उनके शटर धड़ा-धड़ बन्द होने लगे।

लोग बहुमंजिला इमारतों की खिड़कियों, दरवाजों और बालकनियों से ऐसे झांक रहे थे मानो यह जुलूस न होकर साक्षात मौत का तांडव है।

दूसरी ओर वह गरीब मजदूर अपने भूखे पेट पर हाथ रखे हुये सड़क पर पड़ी थाली और इधर-उधर बिखरे हुये रोटी के टुकड़ो की निहार रहा था।

आंखों में आंसू लिये बड़-बड़ाता जा रहा था – 'आज घर में अनाज का एक भी दाना नही। शाम को घर में किस मुंह जाऊंगा, क्या खिलाऊंगा बच्चों को ? हमारे पेट में लात मारने वालों ! क्या कभी तुम्हें होश भी आयेगा ?'

● ●

कितना ईमानदार

गाड़ी विलम्ब पर विलम्ब होती जा रही थी, सभी लोग परेशान हो गये थे। वैसे ही गर्मियों के दिन। रेल गाड़ी के पंखे भी बन्द।

एक लम्बे-चौड़े किन्तु चेहरे पर झुर्रियां पड़े बुजुर्ग से व्यक्ति बेचैनी से अन्दर-बाहर करते जा रहे थे। बड़े दुखी होकर सीट पर बैठते हुए बोले – 'आज तो सब बेशर्म हो गये, टाइम की कोई पाबन्दी नही, चरित्र नाम की कोई चीज नहीं। अंग्रेजों में कम से कम कुछ चरित्र तो था ? और चीज में तो हिदुस्तानी छोड़ हम सबने उनकी नकल मार दो, पर चरित्र की नकल नहीं मारी, उनसे कर्तव्य परायणता नही सीखी। एक अधेड़ व्यक्ति बोला – 'वास्तव में अपने वतन के लिए कितनी कुर्बानी है उनकी, ये देश के लोग नही सीखेंगे। आज के आदमी का स्तर तो इतना गिर गया है कि लोभ-लालच के चक्कर में कब अपनी बात बदल देगा कुछ नहीं कहा जा सकता।'

लोग वहां पर इकठ्ठा हो गये थे और गौर से बातें सुनने लगे थे। वह बुजुर्ग व्यक्ति आजादी से पहले की तमाम बातें लोगों को बताने लगे थे। तभी एक युवा चुटकी लेते हुए बोला –

'क्यों ताऊ जी ! स्वतंत्रता संग्राम सेनानी लगते हैं।'

'हां बेटा ! हूं तो स्वतन्त्रता संग्राम सैनानी ही, पर तुम्हें क्या पता..

..। आजाद देश में हुआ है न तुम्हारा जन्म इसीलिए तुम लोगों को इन सब बातों से मतलब भी क्या है।'

'नही ताऊं जी ! आजादी तो आप लोगों की कुर्बानी से मिली है हमें।'

'हां मिली होगी, पर अब तो हमको घुटन होती है इस तरह की आजादी में भी। तब जाने क्या-क्या सोचा करते थे हम लोग। आज तो ठीक उसका उल्टा देख रहे है।'

'ताऊ जी ? चिन्ता न करें हम लोग सब ठीक करेंगे।'

उस युवा की बातों को सुनकर सीट के किनारे चुपचाप बैठा एक व्यक्ति उठ खड़ा हुआ।

'क्या ठीक कर लोगे तुम लोग खाक। आज के लड़कों की तो बात करने की तो तमीज नहीं क्या देश के बारे में सोचेंगे ?'

एक आदमी धीरे से बोला -

'कितना बदल गया माहौल ! देखो न पहले दुष्ट प्रवृति के लोगों को एवं अपराधिक तत्वों को कहीं न कहीं सजा मिल ही जाती थी, पर आज तो चोर और हत्यारे खुले आम सीना चौड़ा करके घूम रहे है। वे चिल्ला-चिल्लाकर हत्यायें करते है, और पुलिस उनका कुछ नहीं कर पाती। बल्कि उन्हें प्रोत्साहन देती है। भ्रष्ट अधिकारी-कर्मचारीयों की अधिक से अधिक सजा फिलहाल निलम्बन है जो कुछ ही दिनों बाद फिर बहाल हो जाते है। सरकार महीनों तक उन्हें मेहमान बनाकर घर में खिलाती-पिलाती है और फिर उन महीनों का ढेर सारा पैसा भी इनाम के रूप में एक साथ उन्हें मिल जाता है।'

आजादी से पहले मैंने कभी नहीं सुना कि रेल दुर्घटनाएं हुई हों। अब आये दिन सुनो कि अमुक स्थान पर रेल दुर्घटना हो गई है अव्यवस्था तो चरम सीमा पर है, न तो डिब्बों में पानी है न बिजली और न ही कहीं सफाई। जिस तरफ देखो वहीं लापरवाही। क्या जमाना था कि एक छोटी सी रेल दुर्घटना में शास्त्री जी ने इस्तीफा दे दिया था।

इतने में टी0.टी0 महोदय पहुंच गये थे, बुजुर्ग सेनानी ने उससे कहना शुरू कर दिया,

'ये क्या व्यवस्था है कोई समय नही है गाड़ी का, इतनी लेट हो गई

गाड़ी, और अभी कुछ पता नहीं।'

टी0.टी0 किसी सही सूचना देने के बजाय अधिकारियों पर दोषारोषण करने पर जुट गया था।

'क्या करें, आप अनुशासन की बात करते है, पर अब पहले का जमाना नहीं रहा पहले तो ठीक समय पर यदि गाड़ी नही चली तो नौकरी से हाथ धोने पड़ते थे जो अच्छु काम करता था उसे इनाम मिलता था किन्तु अब तो ठीक काम करने वाले दण्डित होते हैं उन्हें सजा मिलती है।'

'आखिर ऐसा क्यों ?' बुजुर्ग सेनानी ने पूछा।'

'इसलिए कि अधिकारी, कर्मचारी चापलूस हो गये। गाड़ी को तेज रफ्तार पर चलाने में अधिकारियों को पटरी उखड़ने का डर बना रहता है। अरे साब सब भ्रष्ट हो गये। पूछो मत, ये बड़े अधिकारी तो ज्यादा ही भ्रष्ट हो गये, सारा देश ग्रस दिया है इन्होंने, हर चीज में पैसा चाहते है। कमीशनखोरी हो गई....।'

आदि बातें कहते-कहते वह बहुत कुछ कह बैठा था।

एक युवा उसकी बातों को गौर से सुन रहा था उससे रहा न गया। उसने टी0.टी0 का हाथ पकड़ा और उसकी बगल में बैठकर बोला -

अरे भाई ! तुम सारी दुनियां के लोगों को भ्रष्ट कह रहे हो। तब तो तुम्हें ईमानदार होना चाहिए था पर तुम तो भ्रष्टाचारियों से भी दो कदम आगे हो। बीस रूपये के आरक्षण पर तुमने खुलकर लोगों से सौ-सौ रूपये लिये। लोगों की मजबूरी का खूब फायदा उठाना जानते हो तुम। और एक गरीब आदमी के पास पांच रूपये कम मिले तो तुमने उसे डिब्बे से ही उतार दिया।

युवा की बात सुनकर वह चुपचाप सिर नीचे किये दूसरे डिब्बे में चला गया।

टी0टी0 के जाते ही पुनः भ्रष्टाचार पर बहस छिड़ गयी। किसी ने डिब्बे की आखिरी सीट से आवाज दी -

'ओह ! कितना ईमानदार है बेचारा।'

● ●

वह जरूर लौटेगा ?

नदी का किनारा दोनों ओर छोटी-छोटी पहाड़ियां बीच में कुछ समतल सी भूमि। यह लम्बी घाटी जो भिक्यासैंण से शुरू हुई सुन्दर और मन को लुभा रही थी, अपनी अनुपम छटा बिखेरती यह घाटी सामान्य व्यक्ति का ध्यान भी बरबस अपनी ओर आकर्षित कर लेती है।

मैदान जैसे बिलकुल समतल स्थानों पर बसे छोटे-छोटे गांव, अधिकांश के मकानों पर चूना पुता हुआ। गांव के नीचे फलदार वृक्ष, बल्कि सड़क के किनारे बसे गांवों और मैदानों के फलदार वृक्ष सड़क के ऊपर तक छाये हुए हैं लोगों के आंगन में माल्टे के पेड़ बड़े-बड़े माल्टाओं से लदे हुए हैं। ऐसा लगता है बस टैक्सी से बाहर हाथ निकालते ही पेड़ का एक माल्टा हाथ आ जायेगा।

दोनों ओर हैं गांव और बीच में है सड़क। हरी-भरी धरती के बीच बस में यात्रा करते लोग इतने प्रफुल्लित लग लग रहे थे मानो ये धरती के राजा हों।

मासी आने को पांच किलोमीटर थे। मैं सोचता रहा वह स्थान भी कम सुन्दर नहीं होगा, दूर-दूर देवालयों के स्थान-स्थान पर दर्शन होते जा रहे थे। नीचे समतल और दोनों ओर छोटी-छोटी पहाड़ियां, कितना अवर्णनीय सुन्दर दृश्य।

सड़क के किनारे समतल खेत। इन्हीं में एक खेत की मेंड पर एक

वृद्ध महिला, जिसके चेहरे पर झुर्रियां पड़ी थी सिर पर हाथ रखे न जाने किस गहरी सोच में डूबी हुई थी।

मैंने टैक्सी रूकवाई और उस अनुपम प्राकृतिक दृश्य के साथ-साथ वृद्ध को देखने लगा बहुत देर हो गई पर वह उसी एकाग्र भाव में खोई रही। मन में आया अभी जाकर पूछूं कि क्या सोच रही हो जैसे ही टैक्सी से उतरकर मैं आगे बढ़ा कि एकाएक मेरे कदम रूक गये।

मैं वहीं खड़ा का खड़ा रह गया, मैं भी एकाएक खो सा गया था।

मेरे कानों में कुछ गुन-गुनाहट होने लगी मुझे लगा जैसे उस वृद्ध मां के चेहरे की खामोशी चीख-चीख कर कह रही हो कि इस बुढ़ापे में भी चैन नहीं है, बेटा बहू सब व्यस्त हैं अपने-अपने कामों में। दिल्ली जाकर किसने लौटने का नाम लिया है।

जब तक जिन्दी हूं ये खेत लाल तो करने ही है मैं जीते जी नहीं छोड़ सकती इन्हें, मेरे मरने के बाद तो जो हो मुझे क्या ! और फिर कुदाल को हाथ में लेकर कांपती हुई वृद्ध मां काम करने लगी।

सिर झटक कर मैं पुनः आगे बढ़ा। वृद्ध मेरी ओर पीठ किये कार्य में व्यसत थी। एकाएक मेरी आहट पाकर वह चौंकी, बिजली की तरह तेजी से वह पलटी।

मैंने देखा उसकी गहरी और धूमिल हो चुकी आंखों में एक चमक उभरी।

'बेटा दिनेश !' वह मेरी ओर लपकी।'

'मैं दिनेश नहीं हूं मांजी' ! मैंने कहा, वह ठिठक गई। फिर गौर से मुझे कुछ क्षण तक निहारती रही, फिर निराश लहजे में बोली - माफ करना बेटे मैंने समझा मेरा दिनेश है - पर कहां है मेरी ऐसी किस्मत ?' कहकर उसकी आंखें भर आयी।

'कहां रहते हैं दिनेश भाई ?'

'दिल्ली ! पांच वर्ष हो गये बहू को लेकर गया था दुबारा लौट कर नही आया, न जाने किस हाल में होगा।'

वृद्ध की आंखें छलछला आयी - 'किन्तु मुझे अभी भी आशा है कि वह जरूर लौटकर आयेगा, कहता था कि क्या रखा है इन पहाड़ो में, थमी-थमी सी जिन्दगी है यहां की। मैंने लाख समझाया किन्तु एक

न माना, मुझसे कहा कि तुम भी हमारे साथ दिल्ली चलो किन्तु मैं यहां का मोह नहीं छोड़ पायी, मना कर दिया तो रूठकर चला गया तब से आज तक....।' वृद्धा मौन हो गई पर आंखो का बहाना लगातार जारी रहा।

'फिक्र न करो मांजी, वह अवश्य एक दिन आयेंगे।' मैंने उन्हें कुछ धैर्य बंधाया।

'यही तो मैं भी सोचकर दिन काट रही हूं ! कि बेटा ओ आखिर आयेगा क्यों नहीं ? तमाम दुनियां के लोग यहां इन डांड्यू-कांठ्यूं की सुन्दरता देखने आते है, लाखों रूपये खर्च करते हैं और एक वह है पागला जो यहां छोड़कर बाहर जा रहा है। अरे पेट ही तो पालना है यहां भी तो पाल सकता था ?'

वृद्धा ने एक गहरी सांस ली फिर कुदाल उठाकर अपने जर्जर हाथों से खेत में खुदाई करने लगी 'क्या करें बेटा जब तक शरीर में प्राण है। मैं घर, गांव और खेती को बंजर नही देख सकती।'

मेरा मन बोझिल हो गया। मुझे लगा कि यह दर्द केवल इस वृद्धा मां का नही, बल्कि सारे उत्तरांचल का दर्द दबा है इस वृद्धा सीने में।

मैंने जाने की अनुमति मांगी।

'अच्छा मांजी ! चलता हूं।'

'हां बेटा जाओं। सुखी रहो ! वर्ष भर में लाखों सैलानी आते हैं यहां किन्तु कौन समझा आज तक यहां की पीड़ा सब घूम-फिर कर चले जाते है।'

मुझे टैक्सी तक जाना बड़ा भारी प्रतीत हो रहा था। वृद्धा मां के अन्तिम शब्दों ने जैसे मेरे पावों में बेड़ियां डाल दी थी।

● ●

किसे दोष दूं

गली के अंदर का मकान, दो मंजिले मकान के नीचे का वह बड़ा सा कमरा, बाहर बहुत सारे जूते-चप्पल उतरे हुए है। हमने भी जूते उतारे और अंदर चले गये।

कमरे में जाने के बाद भी मेरी हिम्मत नही पड़ रही थी उसके सामने पड़ने की। जैसे ही उसकी नजर मुझ पर पड़ी दरी से उठकर तुरन्त उसने कोहली भर ली थी और छोटे बच्चे की तरह जोर-जोर से रोने लगा। सब लोग कौतूहल भरी दृष्टि से यह दृश्य देखने लगे धर्मेन्द्र ने बहुत देर तक भी मुझे नही छोड़ा।

मैंने उसे समझाया कि कुछ बातें भगवान पर छोड़ देनी पड़ती है और फिर ऐसे समय में धैर्य रखने की जरूरत है नही तो बच्चों पर क्या असर पड़ेगा।

पिता को रोते देखकर बच्चे और भी भावुक हो गये थे। और फिर तो धर्मेन्द्र के चुप कराने के बाद भी बच्चे चुप न हो पाये थे, तो वह और बिफरकर रो पड़ा। एक बार फिर मातम का सा वातावरण बन गया था।

थोड़ी देर फिर सन्नाटा सा हो गया। ऐसा लग रहा था कि इन तीस-चालीस लोगों के होते हुए भी जैसे यहां कोई नही।

धर्मेन्द्र ने उस सन्नाटे को तोड़ा - 'निशंक' ! मेरी किस्मत में

ससुराल की तरफ से भी ऐसा कोई नही रहा जो कुछ मदद करता मैंने पन्द्रह साल की नौकरी में कभी इच्छित स्थान नही मांगा, पहली बार मैंने इन परेशानियों में देहरादून मांगा था। सब अधिकारियों से जिक्र किया था मैने। कुछ को तो सहानुभूति भी थी मेरे साथ, पर ऐसी कोरी सहानूभूति का भी क्या करना था और कुछ तो ऐसे थे जिनमें एक तो मेरी नौकरी तक खाने को तैयार हो गया था अपने कमरे से उसने मुझे बाहर कर दिया था। 'कैसे हिम्मत हुई मेरे पास आने की। चले जाओं यहॉ से, एप्लीकेशन देना भी है तो प्रोपर चेनल एप्लीकेशन चलाओ!'

उसे क्या पता कि मुझ पर क्या बीत रही है। मैं महीने-महीने एप्लीकेशन देता रहा, पर जाने कहां जाती रही वे। कोई पूछने वाला न था। ले-देकर तबादले हो जाते थे। मुझे तो आश्वाशन के सिवाय ओर कुछ नही मिलता था इन तीन-चार सालों में इतना जरूर हुआ कि यदि मैंने पूरब मांगा तो इन्होंने मुझे पश्चिम दिशा में भेजा।

मुझे पता तो चल गया था कि देहरादून जैसा स्थान बहुत पैसा देकर मिलता है। पर मैने तो हमेशा ईमानदारी से नौकरी की। कहॉ से लाता मैं इतना पैसा।

कितना नही गिड़गिड़ाया था मैं अपने अधिकारियों के सामने कि परिवार को बर्बाद होने से बचा दें सिर्फ एक साल के लिए मुझे देहरादून दे दें। तो अपनी पत्नी का मैं वहां अस्पताल में अच्छी प्रकार इलाज करा सकता हूं। बीमार पत्नी की देख-रेख करने वाला कोई नही, बच्चे भी मां-बाप होते हुए अनाथ बने है। पर अधिकारियों की क्रूरता देखो। कहते-कहते वह एक बार फिर रो पड़ा था।

मैंने कहा तुम समझदार हो कुछ तो धैर्य रखो ? बोला - 'समझदार ही तो नही रहा समझदार होता तो नौकरी छोड़ कर चला आता इस नौकरी के मोह ने ही....।' क्या करता मैं ! नौकरी करता, बच्चों को देखता या पत्नी को बचाता, तीनों ही काम तो मेरे लिए जरूरी थे। आज बहुत कुछ खो दिया है मैंने। अब तो जिन्दगी भर रोना है किसी तरह दिन ढकेलने की बात हो गई।'

मैंने पूछा - 'आजकल कहां हो।'

'मैं मूर्ख यदि पहले ही कुछ निर्णय ले लेता तो पत्नी से हाथ न

धोना पड़ता। नौकरी से हाथ धोने पड़े है।'

'पर क्यों ?'

'उस समय मैं ड्यूटी से लौट रहा था। सभी ने कहा टेलीग्राम आया है। मेरा माथा ठनक गया था, कोई अशुभ समाचार जरूर है। या तो सुमन के बीमार होने का नहीं मौत का समाचार पाया बस उसकी मौत के समाचार ने मुझे पागल बना दिया था। मुझे लगा जैसे मेरी सारी दुनियां लुट गई। मैं उल्टे पांव उसी समय एस.एस.पी. की कोठी पर पहुंचा और जितना कुछ भला-बुरा कहना था कोई कसर नहीं छोड़ी। उस समय तो एस.एस.पी. साहब कुछ नही बोले। बस इतना कहा तुम घर जाओ।' मैं बिना छुट्टी लिए सीधे घर पहुंचा और चौथे दिन घर में नौकरी बर्खास्तगी की सूचना मिल गई।

'यह तो बुरा हुआ।'

'जब किसी के बुरे दिन आते हैं तो चारों तरफ से आते है। मैं तो बहुत बुरी तरह घिर गया हूं। सारे पहाड़ मुझ पर ही टूटने थे ?'

'तुम्ही बताओ अब क्या करूं ? इन बच्चों के लालन-पालन के लिए तो मुझे कुछ करना ही पड़ेगा। कैसी किस्मत है इनकी, पहले दो-तीन साल भी ये ऐसे रहे मानो अनाथ बच्चे हों। सुमन भी मुझे कभी क्षमा नही करेगी, अकेली रही अस्पताल में न जाने कैसी स्थिति में गई होगी।'

लोग बधाई देते थे मुझे ! कहते थे -

'धर्मेन्द्र तुम जिस भी ड्यूटी पर जाते हो वही से ईनाम ले आते हो। भगवान का बड़ा हाथ है तुम्हारे ऊपर। पर कहां रहा भगवान का हाथ मेरे ऊपर ? मैं परिवार तक से बर्बाद हो गया।'

फिर बोला

'इसी कर्तव्य निष्ठा...। पर कर्तव्य निष्ठा को भी क्यों दोष दूं। कर्तव्य निष्ठा ने तो मुझे हमेशा ऊपर उठाया। मुझे हर जगह सम्मान मिला।'

जनता ने भी मेरे कार्यों की प्रशंसा की। पर विभाग में कुछ भ्रष्ट और क्रूर लोगों के कारण मुझे यह खामियाजा भुगताना पड़ा। कुछ निष्ठुर लोगों के कारण ही मुझे अपनी पत्नी और नौकरी दोनों से हाथ धोने पड़े।

कमरे में बड़ी दरी बिछी हुई है। महिला-पुरूषों से घिरा धर्मेन्द्र सिसकियां भरता अपनी और अपने दो मासूम बच्चों के अनिश्चित भविष्य और दयनीय स्थिति का रोना रो रहा था, कुछ आला अफसरों की हृदयहीनता के प्रति घृणा और आक्रोश को प्रकट कर रहा था जबकि उसके दोनों मासूम बच्चे टुकुर-टुकुर उसकी ओर निहार कर उसमें पिता के अलावा अपनी मां को भी खोज रहे थे।

● ●

आत्महत्या करूंगी

प्रातः छः बजे का समय, दरवाजे पर खटखट की आवाज आयी, मैने दरवाजा खोला देखा एक महिला खड़ी है। मैं सकपकाया –

'आपके साथ कोई है ?'

'नहीं कोई नही'

'इतनी सुबह-सुबह....'

'बड़े आसरे से आयी हूं। कुछ मदद कर सको तो आजीवन ऋणी रहूंगी' कहते-कहते वह एकाएक पैरों में पड़ गई थी।

'बताइये तो सही क्या बात है क्या मदद कर सकता हूं मैं आपकी ?'

'साब बात क्या होनी है, पॉच बच्चे हैं तीन लड़कियां दो लड़के, सब छोटे-छोटे। घरवाले नौकरी करते थे किसी तरह गुजारा कर रहे थे। उनकी एक बार तबियत बहुत खराब हो गई उन्हें अस्पताल में रहना पड़ा, तो नौकरी से निकाल दिया।'

'मेडिकल नही दिया था ?'

'साब मेडिकल-वेडिकल उनका नहीं चलता, कच्ची नौकरी थी न, बस बड़े साब ने....।'

'कितने वर्ष हो गये थे नौकरी करते'

'दस साल हो गये साब, बड़े साब के घर पर ही काम करते थे।

उन्होने कहा था तुमको पक्का कर देंगे। ये दिन नहीं देखते थे, रात नही देखते थे। बस काम में जुटे रहते थे। बड़े साब घर का कौन सा काम रहा होगा जो वे नही करते थे। पर किस्मत देखो, पक्के तो हुए नहीं नौकरी से भी निकाल दिए।'

'कितने साल हुए ?'

'पांच साल बीत गये साब, तबसे सड़कों पर भटक रहे हैं। मैं हजार बार बड़े साब के पांवों में पड़ गई पर....'

उसकी आंखों से आंसू झरने लगे -

'एक मकान था वह भी भूकम्प से सारा तहस-नहस हो गया, सारे मकान पर बड़ी-बड़ी दरारें पड़ी है। रहने लायक नहीं रहा-'

'तो अब कहां रहते हैं ?'

'रहेंगे कहां, कहीं जगह हो तो रहें, कहीं कोई ठिकाना नहीं उसी टूटे मकान में रहते है।'

'लेकिन वो तो कभी भी ढह सकता है ?'

'तभी तो सब लोग कहते हैं उस मकान पर रहना खतरे से खाली नही। छोड़ दो उसे पर जायें तो हम कहां जाये ? हम तो मरेंगे मरेंगे पर अपने मुंह के आगे बच्चों को भी मौत के मुंह में....।'

'पर भूकम्प राहत में कितना पैसा मिला ?'

'साब ! कसम खाने को एक पैसा भी नही मिला, सुना सरकार ने तो बहुत दिया था पर....'

'आपने किसी को बताया नही ?'

'क्यों नही, कितनी जगह भागे हम। कौन सुनता है गरीबों की। हम को बताते रहे कि जरूर सरकारी मदद मिलेगी। पर मदद तो तब मिलती न जब हमारे मकान को कोई देखने आता।'

'गांव के और मकान भी तो टूटे होंगे ?'

'टूटे है पर देखने कोई नही आया।'

'तब तो उन्हें भी पैसा नही मिला होगा ?'

'मिल गया है लोगों को पैसा। पर उनको मिला जिनका गांव में असर था। यहां तो उनको तक पैसा मिल गया जिनके मकान पर छोटी सी दरार तक नहीं पड़ी।'

'गांव के लोगों ने शिकायत नही की ?'

'कौन करता है बड़े लोगों का विरोध, और हम गये भी थे कानूनगो साब के पास, पर कोई सुनने को तैयार नही, मैने हजार बार हाथ-पांव जोड़े कि एक बार तो मकान की दशा देख लो, यदि वो थोड़ा भी रहने लायक हो तो हमें कुछ नही चाहिए।'

'क्यों नहीं देखना चाहते है ?'

'गांव से थोड़ी दूर है न मकान और मुझे तो किसी ने यह भी कहा कि जब तक कुछ दोगी-लोगी नही तब तक मुश्किल है। पर खाने को तो लाले पड़ रहे है कहां से कुछ दूंगी।'

हम तो बेघर हो गये। सड़को पर आ गये। लोगों को खूब पैसा मिला, सामान मिला, कुछ लोगों ने तो कई बार का सामान लिया पर हम जैसे गरीबों का कोई सुनने वाला नही।

उसी टूटते भवन के अन्दर मुश्किल से रात गुजारते हैं मकान गिरने की डर से रात नींद नहीं आती बाहर भी तो नहीं रह सकते वैसे ही इस साल की बढ़ती ठण्ड, फिर बर्फ भी कम नहीं गिर रही है। हम तो जीते जी ही मर जायेंगे।

कहते-कहते वह जोर-जोर से रोने लगी। मैने कहा - 'ऐसे समय में धैर्य रखने की आवश्यकता है सब हो जायेगा'

बोली - 'सारे संकट एक साथ आ गये। अब तो सिर्फ मौत की प्रतीक्षा रह गई हमें।'

यदि कर सको तो कहीं नौकरी पर चिपकवा दो मुझे अपने इन बच्चों का लालन-पालन तो कर सकूं।

'यदि मुझे कहीं आसरा न मिला तो सच कह रही हूं भैया मैं आत्महत्या कर दूंगी। इसके सिवाय और क्या कर सकती हूं ?' और उसकी आंखो से अविरल आंसुओं की धारा बहने लगी।

● ●

दरार कहाँ पड़ी

हरदम मैं सोचता रहता कि मंगल कितना खुशनशीब है। सुन्दर, मधुर व्यवहार और शुदा कमाऊ बीबी, दो प्यारे-प्यारे बच्चे, कितना सुखी संसार, प्यार भी तो बहुत है दोनों पति-पत्नी में।

सच तो ये है कि कभी-कभी मुझे मंगल से ईर्ष्या भी होने लगती।

किन्तु उस दिन मेरी उसके बारे में बनी तमाम धारणायें बदल गई। जब मैंने आंखों के समाने वह दृश्य देखा। कैसे झुठला सकता हूं मैं उसे ?

सांय को यों ही मिलने चला गया था मैं उसे ! घर के अन्दर पांव रखा ही था कि देखा उसने सारा घर, सारी जमीन जैसे आसमान में उठा रखा था। पत्नी को क्या-क्या नही सुना रहा था। जब पत्नी ने कुछ कहने की कोशिश की तो उसने जोर से पेट पर लात मार दी थी, ओह ! मैने उसे पकड़ लिया था।

'क्या हो गया तुम्हें, क्या कर रहे हो ये ? समझदार होते हुए भी पागल हो गये हो क्या....?'

पर उसे तो कुछ नहीं सूझ रही थी। हाथ पकड़कर उसने रजनी को जबरन घर से बाहर निकाल दिया था – 'तुम्हें जहां जाना है चली जाओ मुझे तुम्हारी जरूरत नही, मै जैसा-तैसा इन बच्चों को पाल लूंगा....'

दो छोटे-छोटे बच्चे, इस सारे दृश्य को देखते जा रहे थे, बेचारे रोने

और चिल्लाने के सिवाय कर भी क्या सकते थे।

मंगल का हाथ पकड़कर उसे रोकने का प्रयास किया किन्तु पत्नी को उसने घर से बाहर निकाल दिया। मैं धर्म संकट में पड़ गया। क्या करूं, क्या न करू पत्नी को बाहर निकालते ही वह सोफे पर सिर पकड़ कर बैठ गया। मैं तुरन्त बाहर गया और भाभी जी का हाथ पकड़कर अन्दर लाना चाहा लेकिन वह भी अकड़ गई।

'किसी की भीख पर नही जी रही हूं। नौकरी करती हूं नौकरी ! ठाठ से रहूंगी और अलग रहूंगी तो कम से कम ये रोज-रोज का सिर दर्द तो मेरा दूर होगा। इन्होंने तो मुझे बिल्कुल ही समझ लिया, बन्धुवा मजदूर की तरह दबाना चाहते है उस पर ये समझते क्या है अपने आपको, इन्होंने कैसे हाथ उठा दिया मुझ पर, बताऊंगी, इन्हें जरूर बताऊंगी। अब तो इनसे पीछा ही नही छुड़वाऊंगी बल्कि इनके होश भी ठीकाने लगाऊंगी।'

और मुझे एक तरफ झटककर वह आगे चल दी।

'लेकिन तुम जाओगी कहां ?'

'मेरे लिए कहीं कोई कमी है क्या ? ऐसे ऐसों को तो मैं...' हताश होकर वापस लौट आया मंगल के पास। वह दोनों को सोफे के दोनों ओर बिठाये आंखो में आंसू लिए सोच में डूबा था जैसे ही उसके पास पहुंचा, मैने उसे जो नही कहना था वह भी कर डाला पहले तो वह चुपचाप सुनता रहा और फिर जब उसकी बर्दाश्त के बाहर हो गया तो जोर-जोर से रो पड़ा।

'तुम जो चाहो कहो। क्यों कि मैंने ही स्वयं अपने लिए नरक ढूंढा है इससे बढ़कर क्या नरक होगा। ओह ! सारे अरमान मिट्‌टी मे मिल गये है मेरे। इस जीने से अच्छा तो मै मर ही जाता जीकर भी करूंगा क्या।'

उसने अपना सिर पकड़ लिया तथा मुझे आश्चर्य हुआ वो मंगल जो कभी दृढ़ता और कठोरता की बात करना था, जो विपरीत स्थितियों में भी बढ़ते रहने की प्रेरणा देता था आज वह इतना भावुक होकर....।

'अरे मंगल कैसी बातें करते हो। तुम तो बिल्कुल ही घायल हो गये हो मैं तो तुम्हें....'

'हां-हां तुम मुझे एक अच्छा इन्सान और सत्यवादी समझते थे न ! लेकिन....' और फिर चुप हो गया।

मैने उसे झकझोरा - कुछ तो बताओ आखिर क्या बात है आज तक तो तुमनें कभी कोई जिक्र तक नही किया।

'कोई अच्छी बात रहती तो जिक्र करता ! मैं बर्बाद हो गया मुझे नही पता था कि मेरा उठाया गया यह कदम...'

'लेकिन हुआ क्या' - मैने पूछा - 'तुम्हारा जीवन तो सुखमय है, ईश्वर ने तुम्हें दो बच्चे....'

'यही तो मजबूरी है' - वह तड़फ उठा 'यदि न होते तो मैं आज तक तो इसके होश ठिकाने लगा देता।'

'लेकिन में अचानक आज क्या हो गया है' - मैंने पूछा।

'आज नही इसने तो वर्षो पूर्व मुझे जीते जी मार डाला सबसे सम्बन्ध तोड़ डाला मेरा, मां-बाप भाई-बहिन किसी से भी तो रिश्ता नही रहा मेरा।' - कहते-कहते उसकी आवाज भर्रा उठी।

'विजय जब मेरी शादी हुई थी तो मैंने सोचा कि मैंने एक पढ़ी लिखी शिक्षित और नौकरी शुदा लड़की को पाकर दुनियां की अनमोल वस्तु पा दी है। मेरी खुशी का कोई ठिकाना न रहा।'

मैं नौकरी पर था, छः माह बाद घर आया तो इसने ऐसा माहौल बना रखा था कि मेरे न चहते हुए भी इसने घर के चूल्हे अलग करवा दिये।

मैंने सोचा इसमें कहीं न कही घर वालों का भी दोष होगा अतः कुछ न कहा।

मेरे जिस देवता स्वरूप भाई ने किसी तरह स्वयं मजदूरी करके मुझे पढ़ाया-लिखाया, इसने उनके तमाम आहसानों का बदला ताने देकर उनका ह्यद छलनी-छलनी करके चुकाया।

एयर फोर्स की नौकरी में रहते हुए इसके द्वारा मां की दुर्दशा का पत्र पाकर मेरा मन विचलित हो उठा था। इस आयु में भी उनको किसी का कोई सहारा न था, जब मुझे लगा कि इधर बच्चों की पढ़ाई और उधर मां की स्थिति ठीक नही है, तो समय से पहले ही नौकरी छोड़कर घर चला आया, फिर भी स्थिति नही सुधरी मेरे घर आने पर और स्थिति बिगड़ती गई। मुझे पहले की अपेक्षा और अधिक तनाव से गुजरना पड़ा।

पत्नी भी तो कैसी जो पति को मारने तक का षडयन्त्र रचती हो। मैं साचता रहा अभी भी कुछ नही बिगड़ा कोशिश कर सब ठीक हो जायेगा। जितना नम्र हुआ ये मेरे सिर पर चढ़ती गई, मुक्त रहना चाहती है। यदि मुक्त ही रहना था तो क्यों किया इसने मुझे बर्वाद। कहकर उसने एक लम्बी सांस ली।

उसके दोनो ओर बैठे अबोध बच्चे सहमे-सहमे से टुकर-टुकर कभी मेरी ओर देखते तो कभी पापा की ओर।

मैं हतप्रभ सा सब कुछ सुन रहा था, मुझे तनिक भी विश्वास नहीं हो पा रहा था कि वाकई ये इतनी सुखी गृहस्थी के मर्म में इतनी कडुवाहट भी छुपी हो सकती है।'

'फिर क्या हुआ' मैंने पूछा

होना क्या था ? मेरे घर आने के बाद भी इसने अपना स्वभाव नही बदला अब उसकी पूरी स्थिति मेरे सामने उभर कर आ गयी थी। मैंने सास-ससुर से भी अपेक्षा की किन्तु उन्होंने इसे समझाने की बजाय मेरे बारे में तमाम उल्टी-सुल्टी टिप्पणियां की, इस सबको मैं तब से झेलता आ रहा हूं।

मै समझ नही पा रहा हूं कि मैं अब क्या करूं। इसने मुझे सबसे विमुख तो कर ही दिया किन्तु सच्ची बात तो यह है कि आज तक मै आशान्वित था कि परिवार जुड़ने की कोई न कोई सम्भावना नजर आयेगी किन्तु आज....।

यकायक उसका चेहरा कठोर हो गया, आंखो में मानो खून उतर आया हो, उसकी मुट्ठियां भिच आयी थी - 'आज मैंने निराशाओं के जंगल से अपना पौरूष पुनः खोज लिया है मैंने निश्चय किया कि अब मै इसे बताऊंगा कि मै अभी मरा नही।' कहते-कहते वह जैसे पागल हो गया था। उसने एकाएक उठकर कमरे में टंगे अपनी पत्नी के बड़े-बड़े चित्रों को उठाकर फर्स पर दे मारा। अटैची बक्से आदि निकाल कर इधर-उधर फेकने लगा।

बच्चे जो अभी तक सहमे-सहमे थे अब जोर-जोर से 'मम्मी-मम्मी' चिल्लाने लगे। मैं किंकर्तव्यविमूढ़ सा सोच रहा था-बाहर से इतना मधुर प्रेम दिखने वाले इस दम्पति में यह दरार कहां से पड़ी ?

● ●

रिक्शा वाला

जैसे ही मै बस से उतरा, सफेद पयजामा व कुर्ता पहने वह युवक तेजी से आया और उसने मेरे हाथों से सूटकेश पकड़ लिया।

'बाबू जी रिक्शा !' कहकर वह मेरे सूटकेश को पकड़े मेरे आगे-आगे चलने लगा। रिक्शे के पास तक पहुंचकर बोला -

'बाबू किधर जाना है ?'

'दारूल शफा।'

और उसने सूटकेश रिक्शे में रखते हुए बैठने का आग्रह किया।

मैंने कहा -

'रिक्शे में बैठूंगा तो तभी न ! जब बताओगे कि कितना पैसा लोगे ?'

'अरे बाबू ! बैठिये तो सही ? जो देना हो दे दीजियेगा।'

'फिर भी पहले बता दो बाद में झिक-झिकबाजी होती है।'

'बाबू जी आप तो रोज आते-जाते हो जो देते हो मुझे भी दे देना।'

और बिना पैसा तय किए उसके रिक्शे पर बैठ गया था।

अचानक वह रिक्शा तेजी से चलाने लगा। एक दो बार लगा कि रिक्शा किसी वाहन से अब टकराया और तब टकराया।

मैंने कहा -

'भैया थोड़ा धीरे चलो, कोई जल्दी नही।'

'अच्छा बाबू जी' कहकर वह रिक्शा आराम-आराम से चलाने लगा।

चिल-चिलाती धूप में रिक्शा चलाते-चलाते उसकी कमीज पसीने से तर-ब-तर हो उसकी पीठ से चिपक गई थी। दोनों कनपट्टियों से पसीने की धार गालों से होती हुई ठुड्डी से टपक रही थी। तेज धूप से मेरा सिर भी तर रहा था। इसके बाद भी उसके चहरे पर किसी प्रकार की कोई शिकन न थी।

अचानक फिर रिक्शा तेजी से चलने लगा।

मैने कहा -

'भई धीरे चलाओ, कहीं रिक्शा टकरा गया तो अपने-आप तो मरोगे ही मुझे भी मारोगे, धीरे चलाओ मुझे कोई जल्दी नही।'

बोलो -

'बाबू जी थोड़ा मुझे जल्दी है। जल्दी से घर पहुंचना है न, इसीलिए तो....।'

'कहां की जल्दी हो रही भई।'

'छोटा भाई है न, उसे तैयार कर अभी स्कूल भेजना है, दस बजे उसका स्कूल लगेगा, और मुझे यही नौ बज गई। अभी आपको छोडूंगा, फिर घर जाकर उसे तैयार करूंगा।'

'तो पहले क्यों नही गये ?'

'बाबू जी सात बजे से यहां पर हूं। एक सवारी नही मिली, कैसे खाली जाता।'

'घर में और कोई नही ?'

'नही बाबू जी'

'मां-बाप, भाई-बहिन ?'

'मां बाप होते तो बात ही क्या थी ? भाई-बहिन भी कहा किस्मत में थे मां-बाप मजदूरी करते थे, मै बहुत छोटा था। घर पर अकेला था, कई वर्ष हो गये। मां-बापू मजदूरी करके लौट रहे थे, दंगा भड़का और घर के चौराहे के सामने ही उन्हें....।' उसकी बातें सुनकर मुझे दुःख हुआ, मैने विषय बदला।

'तुम तो कह रहे थे कि छोटे भाई को स्कूल भेजना है ?'

'हॉ ! वह अभागा भी तो अनाथ ही है' - वह बोला।

'अनाथ ? तो तुमने गोद लिया है उसे ?'

'नही ! कूड़ेदान में पड़ा मिला है मुझे।'

मेरी जिज्ञासा बढ़ गई – 'कूड़ेदान में ?'

'हां पांच साल पहले की बात है। किसी औरत ने उसे जन्म देकर एक पेटी में रख कूड़ेदान में फेंक दिया था। सारे मुहल्ले की भीड़ इकट्ठी हो गई थी। पर किसी ने उसे हाथ नही लगाया।'

'और तुम उसे उठाकर घर ले आये ?'

'हां बाबू ! आज तो यहां इन्सान की कोई कद्र ही नही रही, जब मैने अस्पताल में एक डाक्टरनी को सारी बात बताई तो उसने कुछ दिन अस्पताल में रहने को कहा। एक वर्ष तक वह अस्पताल में

रहा उसके बाद से मेरे ही पास है। अब पांच वर्ष का हो गया है। बहुत समझदार है, बाबू ! देर हो गयी है। नाराज हो रहा होगा।

'क्या मां के बारे में नही पूछता ?' मैंने पूछा

'मैने उसे बताया कि तुम्हारे जन्म लेते ही हमारी मां मर गई थी।'

'रिक्शा तुम्हारा अपना है ?'

'अपने रिक्शे का तो ख्वाब ही देखना है। एक बार पैसा इकठ्ठा किया भी था। रिक्शा लेने की ठान ली थी। किन्तु अच्छी वाली स्कूल में भाई का दाखिला करवाया, सब खर्च हो गया। अरे साहब भानु पढ़ लिख जायेगा तो रिक्शे ही रिक्शे हो जायेंगे।'

एकाएक उसने ब्रेक लगाये। मेरा मुकाम आ गया था। उसने झटपट मेरा सामान उतार कर नीचे रखा।

मैंने पूछा – 'कितना पैसा दे दूं ?'

'बाबू जी जितने आप दे दें। कुछ भी नही बोलूंगा....'

मैने फिर पूछा – 'कुछ तो बताओ....'

'बाबू जी जो भी देना हो तुरन्त दे दीजिये, देरी न करियेगा, भाई नाराज हो रहा होगा। स्कूल में देरी होगी तो उसे डांट पड़ेगी।'

मैने चार रूपये उसकी हथेली में रखे, उसने रूपये गिने बिना कुर्ते की जेब में ठूंसे, आगे कोई बात नही की, फिर रिक्शे के एक पैडल पर लगभग खड़ा होकर एक झटके से रिक्शा आगे बढ़ाया और सरपट दौड़ाने लगा।

मै उसे तब तक जाते देखता रहा जब तक कि वह आंखों से ओझल नही हो गया।

एक आत्मीयता उसके प्रति उभर आई सोचता रहा मैं उसका नाम भी तो नही पूछ पाया कहां रहता होगा वह ? क्या फिर वह ढूंढकर भी दुबारा मिल पायेगा ?

● ●

अपरिचित

हमारी बस रूकी, ड्राइवर ने कहा सब लोग खाना खा लो, उसके बाद यह बस सीधे जोशीमठ रूकेगी वहां भी खाने का समय नही मिलेगा गेट के समय पहुंचना पड़ेगा और उसी गेट से बद्रीनाथ जाना पड़ेगा।

सब यात्री बस से उतरने लगे। मैं अपने साथी के साथ सामने की ओर जाने लगा एक जगह लोगों की भीड़ लगी थी। पुलिस ने एक व्यक्ति को पकड़ा हुआ था, खून से लथ-पथ। फिर उसे एक जीप में रखा और देखते ही देखते वह जीप चल दी।

मैं उत्सुकतावश भीड़ के निकट गया पूछा – 'क्या हो गया, क्यों लगी थी भीड़ ?' इतने में एक बुजुर्ग कहने लगे।

'जब किसी के बुरे दिन आते है तो चारों ओर से पेशानियां आती है। क्या सुन्दर खाता-पीता था। भला आदमी था बेचारा। सब लोगों के काम आता था। पर देखो ऐसे वक्त पर भी किसी ने उसकी सहायता नही की। अरे कर देता कोई थोड़ा बहुत उसकी सहायता, तो क्या हो जाता, वो तो ऐसा भी नही था जो भूल जाता।'

बात अभी पूरी भी नहीं हुई थी कि बस जाने का समय हुआ ड्राइवर ने हार्न दिया हम लम्बे-लम्बे कदमों को रखते हुए बस में जा पहुंचे। मेरे साथी रवीन्द्र का मन उसकी बातों को सुनकर विदीर्ण हो

गया। बोला बैग पकड़ो और उतरो, मैंने कहा–क्यों भई आगे नही जाना है, बोला–नही, पहले उसको देखेंगे। अस्पताल चलेंगे, जब तक उसे नही मिलते मन नही मानेगा, मैंने उसे समझाया 'अरे मिलोगे भी तो क्या कर सकते हो। सरकार के पैसे का मामला है हम उसकी क्या सहायता कर सकते है। हम भी तो नंगे है उसकी तरह ?'

रवीन्द्र मुझ पर नाराज हो गया था – 'अरे तुम तो बिल्कुल निर्दयी हो गये हो, हम उसकी कोई सहायता भी न कर सकें पर मिल तो सकते है ? उसकी बात तो सुन सकते है। ऐसी स्थिति में बेचारे को कोई भी तो मिल नही रहा होगा इस पुलिस के चक्कर में तो अच्छा खासा व्यक्ति बर्बाद हो जाता है। पर समझ में नही आता कि इस पर चोट कैसे आयी यदि पैसा जमा नही किया था तो कर देते बन्द उसे, पर ये क्या कि लूह–लुहान हो रखा है। निश्चित पुलिस ने मारा होगा उसे।'

हम दोनों बस से आ गये कण्डक्टर से पैसा वापस लेने का आग्रह किया, पर कण्डक्टर था जो हमारी बात मानने को तैयार न था। एक ओर टिकट का मोह और दूसरी ओर रवीन्द्र की जिद।

कन्डक्टर से कहासुनी हुई किन्तु पैसे वापस नही हुए, बिना पैसा लिए ही हम बस से उतरकर लपकते हुए अस्पताल की ओर चले। दोनों रास्ते में तरह–तरह की बातें करने लगे। चाहे जो भी हो यदि वह निर्दोष होगा तो उसका साथ देंगे। चाहे सारे काम छूट जायें।

अस्पताल पहुंचे। पूछ–ताछ करते हुए उस कक्ष में पहुंचे। डाक्टर मरीजों को देख रहा था, हर किसी मरीज के साथ एक–एक दो–दो व्यक्ति खड़े थे किन्तु एक चारपाई थी जिस पर कोई नही था। हमने डाक्टर से पूछा अभी–अभी पुलिस एक आदमी को लाई कहां है वह ? डाक्टर ने अनभिज्ञता प्रकट कर दी। बाहर आकर चपरासी से पूछा तो उसने बताया कि पीछे वाले अकेले कमरे में उसे रखा गया है। हम उसे साथ लेकर उस पीछे वाले कमरे में पहुंचे। बाहर दो पुलिस के जवान तैनात थे पहले तो उन्होंने मिलने के लिए इजाजत नही दी किन्तु अधिक आग्रह करने पर हमें इजाजत मिली।

अन्दर चारपाई पर लेटा खून से लथ–पथ उस व्यक्ति के अभी कपड़े भी नही बदले गये थे। थोड़ा बहुत पट्टी इत्यादि कर रखी थी।

जगह–जगह चोटें आई थी सिर लगभग पट्टियों से भरा था आदमी का पूरा नक्शा ही बदला लग रहा था।

रवीन्द्र उसके हाथ पर हाथ रखते हुए बोला –

'क्या हो गया, यह सब कैसे हो गया ?' वह मौन हमें निहारता रहा। उसके देखने से लगा जैसे वह सोच रहा है कि यह सब पूछने से कुछ नहीं होने वाला। उसकी आंखें बोल रही थी मानो यह सब पूछकर हम उसका उपहास कर रहे है पर रवीन्द्र भी थका नही, बोलता ही चला गया। बाहर खड़ा पुलिस का जवान गुस्से में अन्दर आया बोला – 'आप लोग बेवजह परेशान कर रहे है उसे।' जवान के बोलने पर मरीज गुस्से से तमतमाया बोला –

'ये परेशान कर रहे है मुझे या तुमने किया ?' और फिर एकाएक उसकी आंखों से आंसू बहने लगे, लम्बी कहानी है साब, हम गरीब लोगों पर तो भगवान को भी दया नही आती है फिर मनुष्य ने तो क्रूर होना ही है। सरकार भी किसी बेबस की मजबूरी नही देखती और अपने नियम कानूनों द्वारा गरीबों का गला घोंट देती है। साब सरकार के नियम कानून सब गरीबों को सताने के लिए होते है अमीरों के लिए नही।

गरीबों के अरमान तो यों ही मिट्टी में मिल जाते हैं। मैंने भी अच्छे जीवन की कल्पना की थी, पर आज जीवन से निराश हाथ–पावों से टूटा अपंग व्यक्ति अस्पताल की खटिया पर पड़ा है। और उधर मेरे छोटे–छोटे बच्चे बाप के जीते जी अनाथ से हो गये है।

क्या बुरा किया था मैने कि सरकार से कर्जा लेकर एक आटा पीसने की चक्की लगाई थी और किस्त भी तो लगातार दे रहा था। पर ईश्वर को कहां मंजूर था। आज से तीन साल पहले मशीन पर मेरा एक पांव आ गया, और इस कम्बख्त पैर के इलाज ने जितना भी पैसा था सब खत्म कर दिया। इतना ही नही जब पैसा नही रहा तो मशीनों को बेचकर इलाज कराना पड़ा। दो साल बाद ठीक हो पाया।

फिर एक बार हिम्मत जुटाई और दो–चार खेत थे एक छोटा सा मकान था उसे भी बेच डाला और फिर से आटा पीसने की चक्की लगा ली, अभी दो माह भी नही बीते थे कि वसूली शुरू हो गई कहां से देता पैसा ? इधर–उधर बहुत हाथ–पांव मारे लेकिन थोड़ी भी सहायता करने

को कोइ तैयार न हुआ। मैंने सरकार से भी प्रार्थना की पर सरकार ने भी एक नही सुनी। मन्त्री जी को भी लखनऊ जाकर हाथ जोड़े आया था पर उसका भी कोई असर नही पड़ा। रोज पटवारी धमकी देकर चला जाता था। पटवारी जी को भी बहुत हाथ–पांव जोड़े पर वे कहां मानने वाले थे।

आज सुबह–सुबह अचानक पुलिस गांव में आ फटकी, मै पुलिस से बचना चाहता था, मुझे डर था कि ये मशीनों की कुर्की करने के साथ–साथ मुझे मारेंगे भी। पुलिस को देखते मैं छत से कूदा और भागने की कोशिश करने लगा। लेकिन मैं वहीं लुटक गया मरे दोनों पांवों की हड्डियां टूट गई एक पांव की हड्डी तो पहले टूटी थी वह तो फिर टूटी, दूसरी टांग को भी मैं हाथ से गवां बैठा वह फिर जी भर कर रोने लगा था, साब सिर बचा था उस पर भी कई घाव आ गये।

'रवीन्द्र बोला लेकिन तुम भागे क्यों ?'

'साब पटवारी जी ने कहा था कि अब पुलिस आयेगी और मारते हुए ले जायेगी।'

'साब मैंने कितनी विनती की थी कि मुझे कुछ समय और दे दे तो मैं सरकार का सारा कर्जा चुकता कर दूंगा।'

इतने में डाक्टर आ गये थे इनके पांवों का पहले एक्सरे होगा फिर आज ही प्लास्टर कर दिया जायेगा एक्सरे कक्ष में उसकी जाने की तैयारी होने लगी और वह घूर–घूर कर हमारी ओर देखने लगा मानो कह रहा हो कि एक तुम ही तो हो जो मेरी खोज खबर करने आये, गांव में लोगों के लिए तो मैं जिऊं चाहे मरूं उन्हें क्या, पर तुम भी अब मुझे ऐसे ही छोड़कर चले जाओगे।

रवीन्द्र ने उसकी आंखों के भाव पढ़ लिए थे बोला – 'तुम चिन्ता न करो जब तक तुम ठीक नहीं हो जाओगे तब तक हम तुम्हारे साथ रहेंगे, एक बार फिर रघुवीर की आंखों में आंसू छलक आये।

'इधर पता चला कि पुलिस ने उसकी मशीनों की कुर्की के आदेश निकाल दिए, रवीन्द्र को बहुत बुरा लगा, बोला – विमल तुम यहीं रहो, मुझे दो दिन की छुट्टी दे दो मैं इनकी मशीनों को हरगिज नीलाम न ही होने दूंगा। वह घर गया पुलिस से यह कहकर कि दो दिन का समय

दें तो वे पन्द्रह हजार की इस राशि को जमा कर देंगे, लेकिन रवीन्द्र को घर से लौटने में एक दिन बिलम्ब हो गया पुलिस ने नीलामी के लिए तीसरे ही दिन तारीख सुनिश्चित कर दी। मुझे चिन्ता हुई यदि रवीन्द्र के आने से पहले ऐसा हुआ तो वह मुझ पर बरस पड़ेगा कि मै क्या कर रहा था।'

रवीन्द्र पहुंचा, जब उसे ज्ञात हुआ कि आगे अब पैसा जमा नही होगा बल्कि मशीनों की नीलामी होगी, तो वह भी भागता हुआ तहसील जा पहुंचा। बीस हजार की मशीनों के कोई दस हजार रूपये देने को भी तैयार नही था।

रवीन्द्र ने सर्वाधिक दस हजार की बोली बोलकर मशीनों को अपने अधीन कर लिया और आकर रघुवीर से बोला कि तुम्हारी मशीनें सरकार ने मुफ्त कर दी है। अब तुम अच्छी तरह से ठीक हो जाओ। गांव में तुम्हारी पत्नी ने चक्की को शुरू कर दिया है।

● ●

कैसी किस्मत

वह नशे में आज कुछ ज्यादा ही धुत था। लड़खड़ाता हुआ आया और बोला -

'क्यों अपने खून को भी नहीं मिलना चाहते ? मुझे न सही, उसे तो मिलो, देख तो लो उसकी क्या दशा हुई है....'

बल्लभ उसकी बात को अनसुनी करना चाहता था वह आगे बढ़ने लगा कि युवा ने बल्लभ का हाथ पकड़ा।

'अब तो बड़े नेता हो गये हो न कहां देखोगे हमारी ओर, लेकिन हम यहीं भी आपको बता देना चाहते है कि यदि भतीजी की जान की थोड़ी भी चिन्ता है तो चले चलो घर पर ....।'

बल्लभ बोला -

'तुम्हारी इस हालत में तो मैं बिल्कुल घर नहीं आऊंगा' और जोर से झटका देते हुए वह मेरा हाथ पकड़े निरीक्षण भवन के एक कमरे में ले गया, कुर्सी पर बैठते ही गहरी सोच में डूब गया। मैं कुछ पूछना चाहता था पर कुछ बताने को तैयार नही, आंखें आंसुओं से डबडबा रही है।

मैंने जानना चाहा ये युवा कौन था - 'खाते-पीते घर का लग रहा है पर शराब ने तो पूरे पहाड़ को ही बर्बाद कर दिया है।'

मै अभी अपनी बात पूरी कर भी नहीं पाया था कि बल्लभ

झुंझलाकर बोला – 'ये वही तो है जिसने हम सबको बर्बाद करके रख दिया है। और उस फूल जैसी लड़की को तो इसने नरक में घकेल दिया है। क्या करूं कुछ समझ नहीं पा रहा हूं।'

'मैंने चौंकते हुए पूछा – क्या ये सुमति का पति है....।'

'पति के नाम पर तो ये कलंक है।' और इसके मां-बाप तो दो कदम आगे है। असलियत में मैं तो यहां सुमति की शादी के लिए तैयार ही नहीं था, पर यह शादी तो दारू में ही हुई है। बड़े भाई साहब ने दारू की झोंक में इनसे बात चीत कर इसकी मंगनी सुनिश्चित कर दी। मैंने तब भी कहा था अभी अच्छी प्रकार देख-भाल लो एक दिन का खेल नहीं, लड़की ने जिन्दगी गुजारनी है। पर कहां....। अपने आप तो सुबह से शाम तक शराब पी-पीकर बर्बाद हो ही रहे थे, ऊपर से हम सबको भी बर्बादी के कगार पर खड़ा कर दिया है। इनकी शादी हुए तीन वर्ष हो गये और इस लड़के ने इन तीन वर्षों में हमसे पैसा ले-लेकर हमें कंगाल कर दिया है। घर के खेत बेचे मेरे पास जितना कुछ भी था मैंने दे डाला पर अभी भी इसे लगता है कि न जाने हमारे पास कितना पैसा है....।

'लेकिन इतने पैसे का करता क्या है ?'

'करता क्या है उससे शराब पीता है। और दोस्तों पर पैसा फॅूकता है अब तो पता चला कि उसने जुआ खेलना भी शुरू कर दिया। पहले मार-पीटाई से दूर था पर अब तो रोज मार-पिटाई के केस में थाने में रहता है। उस लड़की की किस्मत....।'

जाने कहा से लायी वह ऐसी किस्मत। ससुर को अच्छी खासी पेन्सन मिलती है, पर सास तो पूरी डायन है। रसोई तक नहीं छोड़ती। गिन कर रोटियां देती है सुमित को। पूरी रसोई पर ताला लगा कर रखती है। केवल इस बेचारी के हिस्से में बर्तन साफ करना और घर का झाडू-पोंछा मारना रह गया है। एक बच्चा है उसे भी सास ने छीन रखा है। बच्चे को बोलती है यह तो हमारा खून है। उसे अपनी मां के पास तक नही जाने देती है। वो बेचारी तो अपने बच्चे को प्यार तक नहीं कर पाती। तरसती ही रह जाती है। पिछली बार गया घर पर, तो एक काल कोठरी में धकेल रखा है उसे। मैं तो पहिचान ही नही पाया इतनी

कमजोर हो गई है। जब से गया था और जब तक वहां पर रहा उसके आंसू टपकने बन्द नहीं हुए थे। मुझे तो डर लगता है जैसी खामोश वह होती जा रही है। कहीं किसी दिन आत्महत्या न कर दे।

और इसने तो मुझे पूरा नंगा कर दिया है। उधर बड़े भाई के इतने बड़े परिवार की जिम्मेदारी। कमाने वाला कोई नहीं। दो लड़कियों की शादी कर दी, एक शादी लायक हो गई है और एक लड़का एक लड़की अभी छोटे है। भाई को कहीं कोई काम नहीं न जाने कहां-कहां घूमते रहते है और न जाने ये कौन लोग है जो सब कुछ जानते हुए भी इन्हें शराब पिलाते है।

दामाद साहब हर दूसरे महीने धमक जाते है आज इतना पैसा चाहिए, आज उतना....। और यदि कभी मैंने समझाने का प्रयास किया तो धमकी देता है कि उसे तलाक दे दूंगा।

न जाने कैसा भाग्य है हम लोगों का, तब लोग कहते है कि शादी क्यों नही कर लेते। चालीस वर्ष तक की इस आयु में तो यह सब कुछ झेल रहा हूं। नौकरी भी ऐसी नही है कि भाई के इस परिवार को भी देख सकूं। और अपनी आवश्यकताओं को भी पूरा कर सकूं। न जाने क्या है किस्मत में।

● ●